



Neutral Citation No. - 2026:AHC-LKO:22340

उच्च न्यायालय इलाहाबाद, लखनऊ

दांडिक अपील संख्या.- 1307/2007

राम सिंह एवं अन्य

.....अपीलार्थी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रतिवादी(गण)

अपीलार्थी(गण) के अधिवक्ता

:-अजय के. सिंह

प्रतिवादी(गण) के अधिवक्ता

:-शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या. - 12

माननीय न्यायमूर्ति मनीष माथुर

1. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री अजय के. सिंह एवं प्रतिवादी-राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।

1क. पूर्व में, आदेश दिनांक 06.02.2026 के द्वारा यह संज्ञान में लिया गया था कि अपीलकर्ता संख्या 1 (राम सिंह) का स्वर्गवास हो चुका है, इसलिए उनके विरुद्ध अपील उपशमित हो गई है, जबकि अपीलकर्ता संख्या 2 (भाना सिंह) जीवित हैं एवं अपील का निर्णय उनके संबंध में किया जा रहा है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

2. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374(2) के अंतर्गत प्रस्तुत यह दांडिक अपील, अपर सत्र न्यायाधीश/त्वरित न्यायालय संख्या-1, हरदोई द्वारा सत्र विचारण संख्या-162/2001, राज्य बनाम राम सिंह एवं अन्य, जो कि मुकदमा अपराध संख्या-30/2000, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 307, 504, 506, थाना सांडी, जनपद हरदोई से उत्पन्न हुआ है, में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 16.05.2007 के विरुद्ध दाखिल की गई है, जिसके द्वारा अपीलार्थी को निम्नवत दोषसिद्ध एवं दंडादिष्ट किया गया है:-

(i) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 307/34 के अंतर्गत चार वर्ष का कठोर कारावास तथा ₹400/- के अर्थदण्ड से दण्डित किया गया तथा व्यतिक्रम की दशा में दो माह का अतिरिक्त कारावास भुगतने का आदेश दिया गया।

3. अभियोजन पक्ष के कथनानुसार, घटना 10.03.2000 की बताई जाती है, जब कृषि संपत्ति को लेकर हुए विवाद के कारण अपीलकर्ता और सह-अभियुक्तों ने कथित तौर पर सूचनाकर्ता के बेटे और भतीजे पर हमला किया था। प्रथम सूचना रिपोर्ट में यह कथन किया गया है कि घटना लगभग 3:30 बजे घटित हुई, जब एक कहासुनी के कारण अपीलकर्ता और सह-अभियुक्तों ने सूचनाकर्ता के बेटे (राजेश कुमार) और उसके भतीजे (बाबू) पर अंधाधुंध गोलिया चलाई, जिसके कारण उनके सिर और शरीर के अन्य हिस्सों में गंभीर चोटें आईं। उपरोक्त घटना के अनुसरण में, उसी दिन 6:30 बजे, अपराध संख्या 30 /2000 के रूप में, भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 504 और 506 के अंतर्गत प्राथमिकी दर्ज की गई एवं चिकित्सीय परीक्षण भी कराया गया, जिसमें चेहरे और शरीर के अन्य हिस्सों पर छरों की चोटों का संकेत मिला। जहाँ चोट संख्या 1 साधारण प्रकृति की पाई गई, वहीं आँखों में लगी चोट संख्या 2 के संबंध में घायलों को चिकित्सीय परीक्षण और एक्स-रे के अधीन रखा गया, जो कि एक्स-रे आख्या के अनुसार साधारण प्रकृति की दर्शाई गई थीं।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

4. उक्त प्रथम सूचना रिपोर्ट एवं चिकित्सीय प्रतिवेदनों को तत्पश्चात अभियोजन पक्ष के कुल सात साक्षियों द्वारा सिद्ध किया गया तथा धारा 313 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत अभियुक्तों के बयान भी अभिलिखित किए गए, जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी का अभियोजन एवं दोषसिद्धि, जैसा कि उपर्युक्त वर्णित है, संपन्न हुई।

5. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता की दोषसिद्धि दर्ज करने में त्रुटि की है, क्योंकि चिकित्सीय आख्या अभियोजन पक्ष के कथनों की पुष्टि नहीं करती और गवाहों के बयानों में तात्त्विक विरोधाभास भी थे, जिन पर ध्यान नहीं दिया गया। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विचारण न्यायालय ने इस तथ्य को भी नजरअंदाज कर दिया है कि घटना अचानक और गंभीर उकसावे के परिणामस्वरूप हुई थी, जिसका लाभ अपीलार्थी को प्रदान किया जाना चाहिए था।

6. विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का संदर्भ देते हुए यह भी तर्क दिया कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के लाभ प्रदान करने का मुद्दा उठाए जाने के बावजूद, न्यायालय ने इसे संज्ञान में तो लिया परंतु इस पर कोई चर्चा नहीं की। इसलिए, यह प्रस्तुत किया गया है कि चूंकि आक्षेपित निर्णय स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अपीलकर्ताओं का कोई पूर्व आपराधिक इतिहास नहीं था, इसलिए वे परिवीक्षा के पूर्ण लाभ के हकदार थे।

7. अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रस्तुत किया है कि अपीलकर्ता को पूर्व में किसी भी अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया गया है। उन्होंने शुरुआत में ही यह स्पष्ट किया कि वे आक्षेपित निर्णय और दोषसिद्धि के आदेश को चुनौती नहीं दे रहे हैं, बल्कि अपने तर्कों को केवल सजा के आदेश तक ही सीमित रख रहे हैं। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क को दर्ज करने के बावजूद कि अपीलकर्ता अपराधी परिवीक्षा

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अधिनियम, 1958 के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने का हकदार था, निर्णय में इस संबंध में कोई चर्चा नहीं की गई।

8. अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के उपरोक्त कथनों को दृष्टिगत रखते हुए, यह अपील जहाँ तक आक्षेपित निर्णय और दोषसिद्धि के आदेश से संबंधित है, खारिज की जाती है। अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश दिनांक 16.05.2007 को एतद्वारा बरकरार रखा जाता है।

9. अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, जिसमें यह तथ्य भी शामिल है कि अपीलकर्ता को पूर्व में किसी भी अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया गया है, विचारण न्यायालय को अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1958 (इसके पश्चात 'अधिनियम, 1958' के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों को लागू करना चाहिए था। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलकर्ता को दंडादिष्ट करते समय न तो अधिनियम, 1958 के प्रावधानों को और न ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के प्रावधानों को लागू किया। आक्षेपित निर्णय में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 के प्रावधानों का लाभ न देने का कोई विशेष कारण भी नहीं दर्शाया गया है। संहिता की धारा 361 को लाभकारी प्रावधानों, अर्थात् संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के साथ या उनके बिना लागू करना आवश्यक है। यदि न्यायालय इनमें से किसी भी प्रावधान को लागू न करने का विकल्प चुनता है, तो ऐसी स्थिति में लाभकारी प्रावधान लागू न करने के लिए विशेष कारण देना आवश्यक है, बशर्ते अभियुक्त अपराधी अन्यथा संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 की धारा 3 या 4 के प्रावधानों के लिए पात्र हो।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

10. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि अभियुक्त-अपीलकर्ता के पास लाभकारी विधि, अर्थात् अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने का वैधानिक अधिकार है और न्यायालय का यह कर्तव्य था कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अंतर्गत अनिवार्य रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 की धारा 3 या 4 की प्रयोज्यता पर विचार करे। यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 के प्रावधानों को लागू नहीं किया गया था, तो न्यायालय को इसके लिए कारण अभिलेखित करने चाहिए थे। अतः, यह प्रस्तुत किया गया है कि उस सीमा तक, आक्षेपित निर्णय और आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के प्रावधानों का उल्लंघन होने के कारण गंभीर अवैधता से युक्त है, इसलिए यह धारणीय नहीं है।

11. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने इस तर्क के साथ दण्डिक अपील का विरोध किया है कि आक्षेपित निर्णय के अवलोकन से यह स्पष्ट होगा कि अपीलकर्ता के विरुद्ध आरोपों को सात अभियोजन साक्षियों द्वारा सिद्ध किया गया है, जिनमें सूचनाकर्ता, दो पीड़ित और परीक्षण करने वाले चिकित्सक शामिल हैं। यह प्रस्तुत किया गया है कि इसी प्रकार के संपुष्ट साक्ष्यों के अनुसरण में ही दोषसिद्धि दर्ज की गई थी। हालांकि, यह भी स्वीकार किया गया है कि विचारण न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया था कि यह अपीलकर्ता का पहला अपराध था, किंतु संज्ञान में लिए जाने के बावजूद इस पर ध्यान नहीं दिया गया। वे स्वीकार करते हैं कि इस पहलू के विरुद्ध कुछ भी प्रतिकूल नहीं है कि अपीलकर्ता का कोई पूर्व आपराधिक इतिहास नहीं है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360/361 के प्रावधानों के अंतर्गत, यह न्यायालय लाभ प्रदान करने पर विचार कर सकता है। हालांकि, यह स्वीकार किया गया है कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के लाभ के संबंध में तर्क दिया गया था, किन्तु फिर भी उस पर कोई विचार नहीं किया गया।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

12. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत दलीलों पर विचार करने और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के परिशीलन के उपरांत, चूंकि वर्तमान में केवल सदाचार की परिवीक्षा के पहलू पर ही न्यायनिर्णयन किया जा रहा है, अतः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और 361 सदाचार की परिवीक्षा पर या भर्त्सना के पश्चात रिहा करने के आदेश से संबंधित हैं। यह प्रावधान करती हैं कि जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु का कोई व्यक्ति केवल जुर्माने से या सात वर्ष या उससे कम की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, या जब 21 वर्ष से कम आयु का कोई व्यक्ति ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है, और अपराधी के विरुद्ध कोई पिछली दोषसिद्धि सिद्ध नहीं है, तो दोषसिद्धि दर्ज करने वाले न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह अपराधी की आयु, चरित्र या पूर्ववृत्त और उन परिस्थितियों सहित विभिन्न पहलुओं पर विचार करे जिनमें अपराध किया गया था। न्यायालय को अपराधी को सदाचार की परिवीक्षा पर रिहा करना चाहिए और उसे कोई दंड देने के बजाय, यह निर्देश देना चाहिए कि उसे प्रतिभुओं के साथ या उनके बिना, एक बंधपत्र भरने पर रिहा कर दिया जाए ताकि वह उक्त अवधि के दौरान शांति बनाए रखने और सदाचार के लिए उपस्थित हो सके और सजा प्राप्त कर सके। अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा भी ऐसी शक्तियों के प्रयोग का प्रावधान किया गया है।

13. उक्त संहिता की धारा 361 कुछ मामलों में विशेष कारणों को अभिलेखित किए जाने का निर्देश देती है, जिसके प्रभावस्वरूप यदि कोई अभियुक्त धारा 360 के अंतर्गत या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत, अथवा बाल अधिनियम, 1960 के अंतर्गत किशोर अपराधी या किशोर अपराधियों के प्रशिक्षण या पुनर्वास से संबंधित किसी अन्य विधि

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के अंतर्गत लाभ पाने का हकदार है, किन्तु उसे ऐसा लाभ प्रदान नहीं किया गया है, तो न्यायालय अपने निर्णय में ऐसा न करने के विशेष कारणों को अभिलेखित करेगा।

14. इस विषय पर केंद्रीय विधान अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 है, जिसकी विशेष रूप से धारा 3 और 4 न्यायालय की उन शक्तियों को दर्शाती हैं जिनके अंतर्गत कुछ अपराधियों को भर्त्सना के बाद रिहा किया जा सकता है एवं कुछ अपराधियों को सदाचार की परिवीक्षा पर रिहा किया जा सकता है।

15. उत्तर प्रदेश राज्य में लागू राज्य विधान उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938 है, जिसमें धारा 3 और 4 क्रमशः कुछ अपराधियों को भर्त्सना के पश्चात और सदाचार की परिवीक्षा पर रिहा करने की न्यायालय की शक्तियों से संबंधित हैं।

16. दण्ड प्रक्रिया संहिता की प्रयोज्यता के प्रश्न पर इस न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा **उत्तर प्रदेश बनाम मिसरी लाल एवं अन्य** में प्रकाशित उक्त निर्णय का प्रासंगिक अंश निम्नवत् है :-

"26. ...उत्तर प्रदेश में धारा 360 के अनुप्रयोग को वर्ष 1975 के एक अध्यादेश द्वारा वापस ले लिया गया था। इस अध्यादेश को निरस्त कर दिया गया और इसके स्थान पर दंड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, संख्या 16 वर्ष 1976 लाया गया। इस अधिनियम को 30-4-1975 को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हुई और इसे 1-5-1976 के उत्तर प्रदेश असाधारण राजपत्र में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम की धारा 12 ने अध्यादेश को निरस्त कर दिया और यह निर्धारित किया कि ऐसे निरसन के बावजूद, अध्यादेश के अंतर्गत किया गया कोई भी कार्य या की गई कोई भी कार्रवाई इस अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत की गई मानी जाएगी, मानो यह अधिनियम 28 नवंबर,

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

1975 से लागू हुआ हो। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने इस मामले का निर्णय 2-2-1976 को किया था। संशोधन अधिनियम संख्या 16/1976 की धारा 10 ने संहिता की धारा 484 में संशोधन किया और खंड (घ) के बाद निम्नलिखित खंड (ड) जोड़ा:-

“(ड) ... युक्त प्रांत प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938 उत्तर प्रदेश राज्य में लागू रहेगा और तदनुसार इस संहिता की धारा 360 के प्रावधान उस राज्य पर लागू नहीं होंगे, तथा धारा 361 के प्रावधानों में उल्लिखित केंद्रीय अधिनियमों के संदर्भों के स्थान पर उस राज्य में लागू संबंधित अधिनियमों के संदर्भों को प्रतिस्थापित करते हुए उन्हें लागू किया जाएगा।”

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 यह निर्धारित करती है कि जहाँ किसी मामले में न्यायालय किसी अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध धारा 360 के अंतर्गत, या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत, अथवा बाल अधिनियम, 1960 या किशोर अपराधियों के उपचार, प्रशिक्षण या पुनर्वास के लिए उस समय लागू किसी अन्य विधि के अंतर्गत कार्यवाही कर सकता था, किंतु उसने ऐसा नहीं किया है, तो वह अपने निर्णय में ऐसा न करने के विशेष कारणों को अभिलेखित करेगा।

उपरोक्त वर्णित धारा 484 के खंड (ड) के साथ पठित इस प्रावधान से यह निष्कर्ष निकलता है कि न्यायालय के लिए उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अधिनियम, 1938 के प्रावधानों का लाभ न देने के संबंध में विशेष कारण

अभिलेखित करना आवश्यक है।"

17. इस प्रकार, जिस भौगोलिक क्षेत्र में 'उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम' को लागू किया गया है, वहाँ उसी के प्रावधानों का पालन किया जाएगा, न कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 का किया जाएगा। इस प्रकार, किसी विशेष क्षेत्र में परिवीक्षा अधिनियम का लागू होना, उस विशेष क्षेत्र में संहिता की धारा 360 के प्रावधानों की प्रयोज्यता को अपवर्जित कर देता है। हालाँकि, न्यायालय का यह अनिवार्य कर्तव्य होगा कि वह इस बात पर विचार करे कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम का लाभ क्यों न दिया जाए, जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अंतर्गत प्रावधानित है।

18. अभियुक्त-अपीलकर्ता को परिवीक्षा अधिनियम का लाभ प्रदान करने की वांछनीयता के बिंदु पर विचार करते हुए, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **सीताराम पासवान एवं अन्य बनाम बिहार राज्य**, AIR 2005 SC 3534 में प्रकाशित में, निम्नानुसार व्यवस्था दी है:-

“विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए, न्यायालय को मामले की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र पर विचार करना होता है। अपराध की प्रकृति पर विचार करते समय, न्यायालय को अपराध की गंभीरता और पीड़ित पर पड़े इसके प्रभाव का एक यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अभियुक्त को उपलब्ध लाभ, प्रावधानों में निहित सीमाओं के अधीन है और शब्द "सकता है" स्पष्ट रूप से यह इंगित करता है कि न्यायालय के पास यह विवेक सुरक्षित है कि वह अपराध की प्रकृति, अपराधी के चरित्र और

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

मामले की समग्र परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपराधी को अधिनियम की धारा 3 या 4 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करके रिहा करे या नहीं। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत शक्तियाँ न्यायालय में तब निहित होती हैं जब किसी व्यक्ति को ऐसे अपराध का दोषी पाया जाता है जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है। इस शक्ति का प्रयोग न्यायालयों द्वारा व्यक्ति को दोषी पाते समय किया जा सकता है और यदि न्यायालय को लगता है कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र शामिल है, को देखते हुए अभियुक्त को लाभ दिया जाना चाहिए, तो इस शक्ति का प्रयोग अपीलीय या पुनरीक्षण चरण में और भारतीय संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत अपील की सुनवाई के दौरान इस न्यायालय द्वारा भी किया जा सकता है।”

19. माननीय उच्चतम न्यायालय ने *मो. हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य*, AIR 2017 SC 660 में प्रकाशित, में निम्नानुसार विचार व्यक्त किए हैं:-

“20. ...रतन लाल बनाम पंजाब राज्य, AIR 1965 SC 444 में, न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने बहुमत की ओर से इस प्रकार विचार व्यक्त किए:-

“यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में सुधार की आधुनिक उदारवादी प्रवृत्ति की प्रगति में एक मील का पत्थर है। यह इस सिद्धांत की मान्यता का परिणाम है कि दाण्डिक कानून का उद्देश्य अपराधी को दंडित करने से अधिक व्यक्ति में सुधार लाना है। मोटे तौर पर, यह अधिनियम 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों और उससे अधिक आयु के अपराधियों के बीच, तथा मृत्युदंड या आजीवन कारावास से

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दंडनीय अपराध के दोषियों और कम गंभीर अपराध के दोषियों के बीच अंतर करता है। जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु के अपराधियों के मामले में, अधिनियम के उचित प्रावधानों में निर्धारित शर्तों के अधीन, उन्हें भर्त्सना के बाद या सदाचार की परीक्षा पर रिहा करने का पूर्ण विवेकाधिकार न्यायालय को दिया गया है, वहीं 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह निर्देश दिया गया है कि वह उन्हें तब तक कारावास की सजा न दे जब तक कि वह संतुष्ट न हो जाए कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र शामिल है, को देखते हुए उन्हें अधिनियम की धारा 3 और 4 के अंतर्गत लाभ देना वांछनीय नहीं है।"

20. वर्तमान मामले में उपरोक्त प्रावधानों और निर्णयों की प्रयोज्यता पर विचार करने से यह स्पष्ट है कि घटना वर्ष 2000 में हुई बताई गई है, जिसमें जुर्माने के साथ अधिकतम पाँच वर्ष की सजा सुनाई गई थी। तब से अब तक 25 वर्ष से अधिक का समय बीत चुका है।

21. जहाँ तक दोषसिद्धि के भाग का संबंध है, इस न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता, विकृति अथवा त्रुटि परिलक्षित नहीं होती है, तथापि उपर्युक्त की गई चर्चा को दृष्टिगत रखते हुए अभियुक्त-अपीलार्थी पर आरोपित दण्ड में संशोधन किया जाना अपेक्षित है।

22. निम्नवत संशोधनों के साथ यह अपील **आंशिक रूप से स्वीकृत** की जाती है:-

19.1. अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि को यथावत् बनाए रखा जाता है। तथापि, अपीलार्थी-अभियुक्त के दण्ड में इस सीमा तक संशोधन किया जाता है कि

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उसे उत्तर प्रदेश परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 का लाभ प्रदान करते हुए परिवीक्षा पर, इस शर्त के साथ मुक्त किया जाता है कि वह आज से एक वर्ष की अवधि तक शांति एवं सदाचार बनाए रखेगा तथा ₹30,000/-की धनराशि के दो प्रतिभूति बंधपत्र एवं अपना निजी मुचलका अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करेगा। साथ ही वह इस आशय का एक प्रतिज्ञान-पत्र भी प्रस्तुत करेगा कि वह आज से एक वर्ष की अवधि तक शांति एवं अच्छा आचरण बनाए रखेगा। उपरोक्त शर्तों में से किसी भी शर्त के उल्लंघन के मामले में, अपीलकर्ता को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा सुनाई गई सजा भुगतनी होगी। उपरोक्त बंधपत्र अपीलकर्ता द्वारा आज से एक माह के भीतर संबंधित न्यायालय को सूचित करते हुए जिला परिवीक्षा अधिकारी, हरदोई के समक्ष दाखिल किए जाएंगे।

23. आदेश की प्रमाणित प्रति आवश्यक अनुपालन हेतु तत्काल संबंधित न्यायालय एवं जिला परिवीक्षा अधिकारी, हरदोई को भी प्रेषित की जाए।

(न्यायमूर्ति मनीष माथुर)

मार्च 31, 2026

सुबोध/-

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।